आर्योदय

ARYODAYE

Read Aryodaye on line -- www.aryasabhamauritius.mu

Aryodaye No. 317 | ARYA SABHA MAURITIUS | *16th Sept. to 25th Sept. 2015*

LET US LOOK AT EVERYONE WITH A FRIENDLY EYE

- VEDA

वेदों में खगोल विज्ञान

L'ASTRONOMIE DANS LES VEDAS

पृथ्वी सूर्य की चारों ओर घूमती है ।

LA TERRE TOURNE AUTOUR DU SOLEIL

ओ३म् आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन् मातरं पुरः ।
पितरं च प्रयन्त्स्वः ।।

यजुर्वेद ३/६

Om ! Āyam gauha prishnirakramidasadan mātaram puraha.
Pitaram cha prayantsvaha.

Yajur Veda 3/6

Glossaire / Shabdārtha :

Ayam – ce / cette, **Gauha** – terre ronde / sphérique (ronde comme une boule), **Pitaram** – Le soleil – le père qui s'occupe du bien-être et de la sécurité de tous ses enfants, **Svaha** – La région du soleil / le système solaire, **Puraha** – en avant, tout autour, **Asadat** – se déplace, tourne sur son axe fixe (rotation), **Mataram** – avec sa mère.

Remarque : Selon les Vedas, l'eau est la mère de la terre, car la terre est formée par un mélange des particules de l'eau et de ses propres particules, et conserve toujours beaucoup d'eau en son sein. Le soleil est le père de la terre, car c'est du soleil que la terre puise toute sa lumière et lui doit son soutien dans l'espace.

prayan – se déplace correctement / tourne
prisniha – dans l'espace, le firmament, le ciel
ākramit – tourne vers les quatre directions

cont. on pg 4

N. Ghoorah

पर्यावरण-रक्षण की पुकार

डॉ० उदयनारायण गंगू, ओ.एस.के, आर्य रत्न - प्रधान आर्य सभा

पर्यावरण के अन्तर्गत वे सभी सजीव और निर्जीव कारक आते हैं, जो एक साथ मिलकर हमारी रक्षा करते हैं। पर्यावरण दो प्रकार का होता है – एक हमारे अन्दर का और दूसरा हमारे बाहर का। दोनों प्रकार के पर्यावरणों को प्रदूषण से बचाना अत्यावश्यक है ।

वेद ने पर्यावरण को बहुत ही महत्व दिया है। हम वेद-मन्त्र के माध्यम से प्रार्थना करते हैं ओ३म् द्यौः शान्तिः अन्तरिक्षँ , शान्तिः पृथिवी, शान्तिः आपः शांतिः ओषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिः ..... आदि।

इस वेद-मन्त्र में प्रकृति के गूढ़ रहस्य को समझने का उपदेश है। पृथ्वी, आकाश, अग्नि, जल और वायु प्रकृति के पाँच तत्व हैं। इन्हीं से सारी सृष्टि की रचना हुई है। इस मन्त्र द्वारा परमात्मा से प्रार्थना की गई कि इस सृष्टि में जो भी तत्व काम कर रहे हैं, सब शांति देने वाले हों, सब हमारा कल्याण करें।

आज हम प्रकृति के उपादानों को हानि पहुँचा रहे हैं। पेड़-पौधों को काट रहे हैं, बाग-बगीचों को उजाड़ रहे हैं। नदी-नालों को गन्दा कर रहे हैं, कूड़े-करकट जलाकर चारों ओर ज़हरीला धुआँ फैला रहे हैं। हवा-पानी सबको खराब कर रहे हैं। इस प्रकार हमारी बुरी हरकतों ने पर्यावरण को प्रदूषित कर रखा है। इसका फल हमें भोगना पड़ रहा है। प्रकृति का प्रकोप सहना पड़ रहा है। तरह-तरह के रोग फैल रहे हैं। खेतों की सब्ज़ियों और फलों में बीमारी के कीड़े पड़ रहे हैं।

हमारे अन्दर का पर्यावरण भी अशुद्ध होता जा रहा है। हमारे पूर्व पुरुषों ने प्राकृतिक पर्यावरण के साथ ही नैतिक और आध्यात्मिक पर्यावरण के प्रति भी पूरा ध्यान दिया था। उनका उपदेश था कि हम अपने मन, बुद्धि और आत्मा को भी शुद्ध बनाये रखें। यदि मन, वचन, बुद्धि और आत्मा में प्रदूषण आ गया तो आदमी सुखी रह ही नहीं सकता। व्यभिचार, भ्रष्टाचार, मिथ्याचार, अनैतिकता, अमानुषिकता में फँसने वाला व्यक्ति मनुष्य के कर्तव्य भूल जाता है । हमारे मन के पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के लिए नैतिक मूल्य, सामाजिक सद्भाव, मातृभूमि से प्यार आदि बहुत आवश्यक है ।

मूल्यों का ह्रास, परिवार का विघटन, संगठन का कमज़ोर होना, अपराधों का बढ़ना, जातीय पागलपन, धार्मिक असहिष्णुता आदि से समाज छिन्न-भिन्न हो जाता है। सामाजिक-सांस्कृतिक प्रदूषण फैल जाता है। इससे व्यक्ति दुख के सागर में डूब जाता है।

सुखी बनने के लिए आवश्यक है कि सबसे पहले हम भीतर से पवित्र हों। भीतर उठने वाले धुएँ को नष्ट करें। जो अन्दर से साफ़-सुथड़ा होता है, वह अपने बाहर के वातावरण को भी प्रदूषण से बचाकर रखता है। वही व्यक्ति प्रकृति की रक्षा करता है, जो अपने को व्यसनों, दुर्गुणों और दुष्ट विचारों से बचाकर रखता है।

वेद ने पृथ्वी को माँ कहा – **'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या'** - अर्थात् यह धरती मेरी माँ है और मैं उसका बेटा हूँ। जिस तरह एक अच्छा बेटा अपनी माँ को दुखी नहीं करता, वैसे ही इस पृथ्वी रूपी माता से प्यार करने वाला पुत्र इस धरती को गन्दा करके इसे हानि नहीं पहुँचाता ।

वेद ने जहाँ पृथ्वी को माता माना, वहीं सूर्य को ऊर्जा का स्रोत बताया। यह पाठ पढ़ाया कि सूर्य की किरणों में वह शक्ति है, जिससे वायुमण्डल में विद्यमान रोगों के असंख्य कीट-कीटाणु नष्ट हो जाते हैं।

ऋषियों ने उपदेश दिया कि सुगंधित सामग्रियों से यज्ञ-कर्म करके वायु की सब दुर्गन्ध दूर कर दो। पानी को शुद्ध बना दो, ताकि उत्तम वनस्पतियाँ उत्पन्न हों। इस धरती के पुत्र-पुत्रियों को वेद ने आदेश दिया कि पेड़-पौधों को पानी से सींचो, उन्हें काटो नहीं, बरगद, पीपल, नीम जामुन, आम आदि बोकर पर्यावरण की रक्षा करो । जिस तरह पेड़-पौधे परोपकार करते हैं, उसी प्रकार तुम भी तन-मन से उपकार का काम करो। दोनों प्रकार के पर्यावरणों की रक्षा करके सबका कल्याण करो ।

पाठकवृन्द, चलें हम वेद के इस उपदेश, आदेश और सन्देश के अनुसार आचरण करें, अवश्य ही पर्यावरण शुद्ध होगा ।

सम्पादकीय

सत्संग की महिमा

मनुष्य को धार्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए सत्संग करने की आवश्यकता होती है। जीवन का मुख्य लक्ष्य प्राप्त करने में सत्संग की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, क्योंकि सत्य, जनों की संगत करने से धार्मिकता का बोध होता है ।

धार्मिक, सात्विक, पवित्र और ज्ञानी लोगों के साथ उठना-बैठना सत्संग कहलाता है। अच्छे विचारकों का संग करना तथा जीवन-निर्माण करने वाली पुस्तकों का स्वाध्याय करना भी सत्संग कहा जाता है। सत्संग जीवन के लिए उतना ही जरूरी है, जितना शरीर के लिए भोजन। जिस प्रकार प्रातः का भोजन सायंकाल तक और सायंकाल का रात्रि भर शरीर को बल देता है, उसी प्रकार सुबह का किया हुआ सत्संग दिन भर पाप, अधर्म, झूठ, फरेब आदि से बचाने में मदद करता है। सायंकाल का सत्संग रात भर मन को बुरे विचारों से सम्भाले रहता है ।

सत्संग से मानव सुधरता है और कुसंग से बिगड़ता है। दुष्टों का संग करेंगे तो दुर्जन बन जाएँगे और सज्जनों से मेल-मिलाप करेंगे तो सदाचारी बन जाएँगे। सत्संग एक ऐसा दर्पण है, जिसमें अपने स्वरूप का बोध होता है और अपने दोषों, पापों तथा कमियों का पता चलता है। इसीलिए कहते हैं कि जहाँ अच्छे लोग होते हैं, वहाँ स्वर्ग है।

सत्संग मन के रोगों की चिकित्सा है। जब मन में काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि उत्पन्न होने लगते हैं, तब सत्संग से प्राप्त ज्ञान, विवेक विचार और वैराग्य मनुष्य को सम्भालते हैं। इन्सान को पतन से बचाने वाले सत्संग की महिमा का गान सभी लोगों ने किया है।

सत्संग बड़े सौभाग्य से मिलता है। जिसपर प्रभु की कृपा होती है; उसे ही मिलता है। यह देखा जाता है कि मंदिरों के सामने से सैंकड़ों लोग रोज़ गुज़रते हैं, परन्तु मन्दिर में प्रवेश कोई-कोई भाग्यशाली ही करता है। सत्संग-प्रेमी ही जानते हैं कि सत्संग की महिमा इतनी बड़ी है कि इससे रजोगुण और तमोगुण दबता है और जीवन में सत्वगुण की प्रधानता जगती है।

सत्संग मनुष्य जीवन को स्वच्छ बनाता है। हमारे मन, विचार, बुद्धि और व्यवहारों में सुधार लाता है। इसीलिए कहा जाता है कि सत्संग मोक्ष का द्वार है। जब व्यक्ति में सत्संग की भूख, जिज्ञासा और तड़प होती है, तभी उसका प्रभाव मन, बुद्धि तथा आत्मा पर पड़ता है। इसी उद्देश्य से आत्मज्ञान, आत्मसुधार, आत्म-कल्याण तथा प्रभु-भक्ति के लिए सत्संग में नियमित रूप से जाना चाहिए ।

सत्संग से विवेक आता है। विवेक से तत्वज्ञान होता है और तत्वज्ञान से सारे दोष दूर होने लगते हैं, जिस पर प्रभु की कृपा होती है उसके जीवन का अज्ञान दूर होता है। संत तुलसीदास कहते हैं –

बिनु सत्संग विवेक न होई ।
प्रभु कृपा बिन सुलभ न सोई ।।

सत्संग आत्मबोध जागृत करता है। जीवन निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अच्छे विचारों से अंदर के खालीपन को भर देता है। पूर्व-जन्म के पुण्य-कर्मों के फल स्वरूप सत्संग करने का सौभाग्य हमें प्राप्त होता है। अतः मनुष्य योनि पाकर नित्य सत्संग करना हमारा धर्म है।

बालचन्द तानाकूर

प्रथम भारतीय स्वातन्त्रय संग्राम –

दयानन्द व विरजानन्द

सत्यदेव प्रीतम, सी.एस.के., आर्य रत्न

क्रांति कहीं की हो – फ़्रांस की क्रांति हो, रसिया की क्रांति हो या सन् १८५७ की भारतीय क्रान्ति हो जिसमें रानी लक्ष्मीबाई ने हिस्सा लिया था, नाना साहब सम्मिलित हुआ हो या कानपुर व अवध के कुँवरसिंह ने भाग लिया हो । सभी क्रान्तियों के मुख्य और मौलिक कारण होता है किसी शासक विशेष द्वारा निर्मम अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाना और अन्त में सशस्त्र गतिविधि का रूप धारण कर लेना जन क्रान्ति या जन विद्रोह की संज्ञा अपना लेना जन क्रान्ति या जन विद्रोह कहा जाने लगता है ।

भारत की जन क्रान्ति में सैनिक तो विद्रोही हुए ही सेनापतियों के अलावा असैनिक जनता भी शासक से लोहा लेने लगी ।

तत्कालिन अँग्रेज़ इतिहासकारों ने उस संघर्ष को जन क्रान्ति न कहकर, इसका ऐतिहासिक महत्व घटाने केलिए '१८५७ का सिपाही विद्रोह या इण्डियन म्यूटिनी की संज्ञा दी और उनकी ठाकुर सुहाती करने वाले या पिछलग्गू भारतीय बुद्धि जीवियों और लेखकों ने भी ऐसे ही नाम दिये। लेकिन उसी क्रान्ति को देश भक्त स्वातंत्र्य वीर सावरकर ने इस को भारत का प्रथम स्वातंत्र्य' नाम देकर इसका महत्व बढ़ा दिया और उसकी पुष्टि भी की ।

उस उथल-पुथल और संक्रान्ति काल में जब सम्पूर्ण भारत स्वतन्त्रता प्राप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा था तब सच्चे ज्ञान की खोज में लोह पुरुष दयानन्द और महान् वैयाकरण गुरु विरजानन्द देश की दुर्दशा मिटाकर देश का उत्थान करने और वेदोद्धार करने का स्वप्न देख रहे थे। वह स्वप्न उन्हें सोने नहीं दे रहा था तब तो कुछ ही वर्षों बाद दयानन्द से भीष्म प्रतिज्ञा कराते हुए उन्हें वचन बद्ध कर लिया था। और कहा था, 'दयानन्द भारत को दयनीय दशा से उबार कर वेद्धोधार करना है। क्या तुम अपनी मुक्ति के लिए काम नहीं करना । सम्पूर्ण भारत वर्ष को मुक्त करना है।' दयानन्द को वचन के पाश में बाँधना और सफल हो जाना बहुत बड़ी बात थी।

आज के कितने संन्यासी केवल अपना देखते हैं । देश जाए भाड़ में, उन्हें क्या पड़ा है? लेकिन न दयानन्द को या उनके गुरु वेद विद्या धनी विरजानन्द को चैन था।

३२ साल का करमचन्द गांधी जब १९०१ के मोरिशस में बसे हुए भारतीय मज़दूरों की दयनीय स्थिति का जायज़ा लिया तो तत्काल सोच लिया कि उन लोगों की सुधि लेने के लिए उन्हीं के समान एक बैरिस्टर को भेजना चाहिए । मणिलाल डॉक्टर को यद्यपि छः साल बाद भेजा पर हीरा मिलना कठिन था। मणिलाल देर आए पर काम अच्छे किये ।

मणिलाल ने अपनी बारी में डा० चिरञ्जीव को भेजा । मणिलाल तो नाम से डॉक्टर थे पर चिरञ्जीव तो पेशे से डॉक्टर थे। वे बीमार शरीर और बीमार समाज को भी ठीक करने वाले थे।

भारतीय क्रान्ति की असफल समाप्ति पर अँग्रेज़ों ने क्रान्ति के कारणों की जाँच-पड़ताल हेतु एक कमीशन बैठाया था। जब आयोग की रिपोर्ट छपी तो एक तथ्य सामने आया कि मूलशंकर व दीनदयाल को लोगों को भड़काने वा उत्तेजित करने वाले व्यक्ति बताया गया । वह मूलशंकर दयानन्द जी ही थे। इस प्रकार देखते हैं कि संन्यासी दयानन्द ने गुरुवर विरजानन्द की पाठशाला मथुरा पहुँचने से पहले ही देश के कल्याणार्थ काम करना प्रारम्भ कर दिया था।

जब यह देखा कि क्रान्ति असफल रही तो मौन रह जाना ही अच्छा समझा। यदि वैसा नहीं करते तो अन्य लोगों की तरह शासन द्वारा दण्ड के भागी बनते और भविष्य में क्रान्ति कार्य रुक जाता । इस महान् क्रान्ति विफलता के बाद ही स्वामी जी ने भारतीय समाज के सुधार का आंदोलन पूरे ज़ोर शोर से प्रारम्भ किया और उसी का परिणाम - आज का आर्यसमाज है ।

सुख एवं शांति का मूल हमारा भीतर है

डा० विनय सितिजोरी

सुख बाहर से नहीं, भीतर आत्मा से आता है। जब तुम पूर्ण मौन, चुपचाप सुषुप्ति अवस्था या शान्त अवस्था एवं वातावरण में होते हो, तब उस समय सुख प्रकट होता है। भीतर हर समय प्रति पल उत्साह, उमंग ऊर्जा व आत्मविश्वास से भरा हुआ जीवन जीओ, भगवान् ने महान् कार्य करने के लिए तुम्हारा सृजन व चयन किया है और वेदों का ज्ञान दिया।

बुद्धिजीवी विचारवान व संस्कारवान ही अमीर, महान्, धनवान् व भाग्यवान होते हैं जबकि विचारहीन - संस्कारहीन व चरित्रहीन ही कंगाल, दरिद्र व बदनाम हैं पर विचारों के मकड़जाल में मत उलझें। क्योंकि भीड़ में खोए हुए इन्सान का पूरा जीवन अंधकारमय हो जाता है। विचारों के मकड़जाल में फँसकर व्यक्ति का जीवन वैसे ही समाप्त हो जाता है, जैसे मकड़ी अपने ही बुने हुए ताने-बाने में स्वयं को बाँधकर समाप्त कर लेती है।

हमें भाग्यवादी या भोगवादी नहीं, पुरुर्षार्थवादी, राष्ट्रवादी, मानवतावादी व अध्यात्मवादी बनना है। हमें प्रान्तवाद, भाषावाद, मज़हबवाद, वैचारिक विवादों से मुक्त संस्कारवाद, आर्यवाद, वैदिकवाद तथा कर्मवाद होना है। क्योंकि कर्म ही हमारा धर्म है। कर्म ही हमारी पूजा है। कर्म ही जीवन व जगत का सत्य एवं शाश्वत सेवा है और इसी में आंतरिक सुख एवं शांति निहित है।

LIVE YOUR DIVINITY WITH DIGNITY

You are a creator, not a terminator.
You are builder, not a destroyer.
You are a divine being, not a crawling creature.
Do you need to kill and destroy in order to live?
Do you need to steal to fulfil your needs when you have been blessed with tremendous strength to strive and live honourably?
Do you need to conquer your enemies when you can embrace the whole world through unconditional love?
Do you need to covet the property of your neighbour when you have the whole earth, ocean and sky for your companion and expansion?
Will you carry your acquired wealth with you when you leave this planet?
Do you need to run after lust, when you can procreate with one partner and live in a loving relationship?
You can live peacefully and happily with all living beings of Nature through help, service and love.
Remember, you have been sent to live and shine in harmony with noble thoughts and deeds.

Dipnarain Beegun

क्या वृक्ष-वनस्पति आदि खाने में पाप है?

पंडित कविराज खेदू

क्या वृक्षों में जीवन है और क्या पेड़-पौधे आदि खाने में पाप है?

आधुनिक युग में खाद्य पदार्थों के सेवन पर सभी धार्मिक संप्रदायों के अलग-अलग दृष्टिकोण हैं।

बहुत से लोगों का कहना है कि ईश्वर ने पेड़, पौधे, पशु आदि सब खाने के लिए ही उत्पन्न किये हैं। नास्तिक लोगों का मानना है कि ईश्वर, जीवात्मा आदि कुछ भी नहीं होता । इसलिए चाहे शाक खाओ, चाहे मांस खाओ, कोई पाप नहीं लगता। अहिंसा का समर्थन करने वाले लोगों का एक मत यह भी है कि केवल पशु ही नहीं, अपितु पेड़-पौधे में भी जीवात्मा होने के कारण उनको खाने में हिंसा है और वृक्ष को काटकर खाने से हम भी मांसाहारी ही हैं, क्योंकि हम उनके शरीर के अवयवों को खाते हैं। यह भी एक प्रकार की जीव-हत्या है। निष्पक्ष होकर हम धर्म-शास्त्रों पर विचार करें। हमें इस समस्या का समाधान आसानी से मिल सकता है ।

दो प्रकार के जगत् हैं – जड़ और चेतन। चेतन जगत् में दो विभाग हैं – एक चर और दूसरा अचर । वृक्ष आदि अचर कोटि में आते हैं, जबकि मानव पशु आदि चर कोटि में आते हैं ।

महाभारत के अनुसार वृक्ष, वनस्पति, औषधि, गुल्म, गुच्छ, लता, वल्ली, तृण आदि अनेक प्रजातियाँ हैं । *(सन्दर्भ - ५८.२३)*

मनुस्मृति में बीज या शाखा से उत्पन्न होने वाले को उद्भिज्ज स्थावर बीज कहा गया है । *(सन्दर्भ - १.४६)*

मनुस्मृति के अनुसार मनुष्य जब शरीर से पापाचरण करता है तो उसके फलस्वरूप अगले जन्म में वृक्ष आदि का जन्म पाता है। *(सन्दर्भ - १२.९)*

मनुस्मृति के अनुसार जो मनुष्य अत्यंत तमोगुणी आचरण करते हैं या अत्यंत तमोगुणी प्रवृत्ति के होते हैं तो उसके फलस्वरूप वे अगले जन्म में स्थावर – वृक्ष, पतंग, कीट, मत्स्य, सर्प, कछुआ, पशु और मृग के जन्म को प्राप्त होते हैं । *(सन्दर्भ - १२.४२)*

आगे मनु महाराज स्पष्ट रूप में घोषणा करते हैं कि पूर्वजन्मों के अधम कर्मों के कारण वृक्ष आदि स्थावर जीव अत्यंत तमोगुण से अवेष्टित होते हैं। इस कारण ये अंतः चेतना वाले होते हुए आन्तरिक रूप से ही कर्म फल रूप सुख-दुख की अनुभूति करते हैं। बाह्य सुख-सुख की अनुभूति इनको नगण्य रूप से होती है अथवा बिलकुल नहीं होती।

आधुनिक विज्ञान में वृक्षों में जीव विषयक मत की पुष्टि डॉ जगदीशचन्द्र वसु जीवात्मा के रूप में न करके चेतनता के रूप में करते हैं। देखा जाये तो दोनों में मूलभूत रूप से कोई अंतर नहीं होता, क्योंकि चेतनता जीव का लक्षण है। भारतीय दर्शन सिद्धांत के अनुसार जहाँ चेतनता है, वहीं जीव हैं और जहाँ जीव हैं, वही चेतनता है।

आधुनिक विज्ञान वृक्षों में जीव इसलिए नहीं मानता है क्योंकि वह केवल उसी बात को मानता हैं, जिसे प्रयोगशाला में सिद्ध किया गया है और जीवात्मा को कभी भी प्रयोगशाला में सिद्ध नहीं किया जा सकता।

शास्त्रों के आधार पर यह सिद्ध किया गया है कि वृक्ष आदि में आत्मा होती है। अब शास्त्रों के आधार पर यह सिद्ध करेंगे कि वृक्ष आदि के काटने में अथवा पौधों आदि को जड़ से उखारने में हिंसा नहीं होती है।

सांख्य दर्शन ५.२७ में लिखा है कि पीड़ा उसी जीव को पहुँचती है, जिसकी वृत्ति सब अवयवों के साथ विद्यमान हो अर्थात् सुख-दुख की अनुभूति इन्द्रियों के माध्यम से होती है। जैसे अंधे को कितना भी चांटा दिखाए, बहरे को कितने भी अपशब्द बोले तो उन्हें दुख नहीं पहुँचता, वैसे ही वृक्ष आदि भी इन्द्रियों से रहित हैं, अतः उन्हें दुख की अनुभूति नहीं होती।

जिस प्रकार बेहोशी की अवस्था में दुख का अनुभव नहीं होता, उसी प्रकार वृक्ष आदि में भी आत्मा को मूर्च्छा अवस्था के कारण दर्द अथवा कष्ट नहीं होता है। यही कारण है कि दुख की अनुभूति नहीं होने से वृक्ष आदि को काटने, छिलने, खाने से कोई पाप नहीं होता और इससे जीव-हत्या का कोई भी सम्बन्ध नहीं बनता ।

भोजन का ईश्वर कृत विकल्प केवल और केवल शाकाहार है और इस व्यवस्था में कोई पाप नहीं होता, जबकि मांसाहार पाप का कारण है।

मनु ५.४८ के अनुसार प्राणियों के वध से मांस उपलब्ध होता है, बिना प्राणिवध किये मांस नहीं मिलता और प्राणियों का वध करना दुख भोग का कारण है, अतः मांस का सेवन नहीं करना चाहिए।

ईश्वर की वाणी वेद का प्रमाण है कि –

१. मांस न अश्नीयात् ।।

अर्थ - *मांस मत खाओ ।*

२. मा नो हिंसिष्ट द्विपदो मा चतुष्पदः ।।

अथर्व. ११/२/१

अर्थ - *दो पग वाले (मनुष्य, पक्षी आदि) और चार पगवाले पशुओं को मत मारो ।*

३. इमं मा हिंसीर्द्विपाद पशुम् ।।

यजु० १३/४७

अर्थ – *इस दो खुर वाले पशु की हिंसा मत करो ।*

प्रमाण सब से अधिक बलवान् होता है। आर्यों को उचित है कि वे अपने जीवन को प्रमाणों के अनुरूप परिवर्तित करें।

श्रावणी प्रतिपदा

घर-घर होवे वेद कथा

घर-घर होवे वेद कथा,
वर्षा होवे अमृत की ।

१. *वेद कथा अमृत वाणी,*
ऋषि मुनियों ने है जानी,
ओट लगी तेरी भक्ति की,
वर्षा होवे अमृत की,
घर-घर होवे वेद कथा,

२. *प्रभु मन का एक गहरा,*
वो सब का जानन हारा ।
प्यास लगी तेरी भक्ति की,
वर्षा होवे अमृत की,
घर-घर होवे वेद कथा,

३. *चलो बन्दे दर्शन करने को,*
अमृत प्याला पीने को ।
होवे कृपा मेरे प्रभु वर की,
वर्षा होवे अमृत की,
घर-घर होवे वेद कथा,

४. *जहाँ वेद कथा नित होवे,*
वहाँ अमृत झरने झरते
कथा सुहावे मोहे प्रभु वर की,
वर्षा होवे अमृत की .....
घर-घर होवे वेद कथा .....
वर्षा होवे अमृत की .....

साभार पं० ग० चतुरी

वेद और संगीत

बिसुनदेव बिसेसर

वेद शब्द संस्कृत की 'विद' धातु से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है ज्ञान। वेद वैदिक धर्म के मूल और सब से प्राचीन ग्रन्थ है। विश्व में वेद ही सब से प्राचीनतम ग्रन्थ है।

वेदवेत्ता महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुसार ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान वेद के प्रमुख विषय हैं। याद रहे ईश्वर, जीव, और प्रकृति इन तीन अनादि एवं नित्य सत्ताओं का सत्य ज्ञान केवल वेद से ही उपलब्ध होता आ रहा है। मनुष्य को जैसे न्याय के अनुसार काम करना चाहिए, वैसे ही वैदिक परिवार, आर्य समाज, देश और संसार को उन्नति करनी चाहिए। अथवा संसार में कैसे हम प्रगति कर सकते हैं। ईश्वर की उपासना कैसे करनी चाहिए। यह बात केवल वेदों में बताई गई है।

मानव सृष्टि की शुरुआत में परमात्मा ने चार श्रेष्ठतम पुण्यात्माओं को वेदों का ज्ञान दिया था। उन चारों ने ऋषियों तक परमात्मा का दिव्य ज्ञान पहुचाया। गुरू शिष्य परम्परा से वेदों का ज्ञान प्रचारित होता रहा, और वेदों की रक्षा होती रही।

इस प्रकार परमात्मा की कृपा से वेद मानव के हृदय में अवतरित हुआ। अग्नि ऋषि को ऋग्वेद, वायुऋषि को यजुर्वेद, आदित्य ऋषि को सामवेद और अंगिरा ऋषि को अर्थववेद का ज्ञान प्राप्त हुआ।

ये सृष्टि के प्रथम पुण्यात्मा थे जिन्होंने सत्य ज्ञान, सत्कर्म और उपासना दवारा मानव को वेद मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। इन्दोंने आध्यात्मिक उन्नति का रहस्य बताया। वेद उध्ययन के पश्चात मनुष्य ने भौतिक चीजों का त्याग किया। अतः वेद ज्ञान की सहायता से ही वह मोक्ष-पद को प्राप्त कर सकता है।

वेद सदा से नया रहता है। वेदों का ज्ञान हर युग में मानव के लिये उपयोगी रहता है। परमात्मा के दो काव्य होते है। पहला वेद और दूसरा भौतिक संसार, वेद लौकिक और पारलौकिक ज्ञान के ग्रन्थ है। धर्म के जिज्ञाशुओं के लिये वेद ही परम प्रमाण है।

गुरुमुख से श्रवण एवं स्मरण करने से वेद का नाम श्रुति पड़ा। समुद्र की भांति अथाह एवं गम्भीर अर्थ वाला होने से इस का नाम निगम पड़ा। छन्द नाम भी पड़ा। और नित्य अध्ययन से इस का नाम स्वाध्याय भी पड़ा।

शब्द प्रयोग की तीन शैलियाँ होती है जो पद्य, (कविता) गद्य और गायन रूप से प्रसिद हैं। इन तीन शैलियों के आधार पर ही शास्त्र एवं लोक में वेद के लिए 'त्रयी' शब्द का भी व्यवहार किया जाता है।

गायन शैली सामवेद का हिस्सा है। वैदिक ग्रन्थों में सामवेद को उपासना और संगीत का आदि स्रोत बताया गया है। शतपथ ब्राहण के अनुसार बिना साम गानों के यज्ञानुष्ठान नही सम्पन्न हो सकता है। प्रमाण (ना साम यज्ञों भवति) क्यों कि यज्ञ में उदगात नामक ऋत्विक ही इस सामवेद के मन्त्रों का गान करता है साम शब्द का निर्वचन भी यही प्रदर्शित करता है। अर्थात् सामवेद गान रूप में प्रस्तुत किया गया है।

साम का दूसरा अर्थ है देवों को प्रसन्न करने वाला गान, अधिकांश मन्त्र ऋग्वेद से लिये गये हैं। और संगीत में बांधे गए है। संगीत के बिना जीवन रसहीन और निरर्थक होता है। हर पल की मधुरता के लिये संगीत का सहारा चाहिये। संगीत की शुरुआत सामवेद को ही माना गया है। संगीत प्रेमियों एवं यज्ञ उपासना के लिए सामवेद एक अनमोल वरदान है, वेद मन्त्रों को सभी रूप से उच्चारण करने से भी संगीत स्वयमेव प्रकट हो जाता है। क्यों कि मन्त्रों में अलग-अलग स्वर और लय पाए जाते हैं।

लय और स्वरों पर ध्यान देने से शब्दों में मधुरता की उत्पति होती है। और सुनने वालों को आन्नद की प्राप्ति होती है। संगीत परमात्मा की देन है, सदा गाते रहना है और आन्नद में रहना है।

गतांक से आगे

युवा जीवन और मद्य-सेवन

रामझीतन करिश्मा

युवक-गण मदिरापान क्यों करते हैं? यह प्रश्न बार-बार मन में उठता है? कुछ युवक खुशी के अवसरों पर या तो स्वयं माता-पिता तो कभी मित्रों के साथ विवाह, सगाई के अवसरों पर पीते हैं। आजकल तो माता-पिता जवान बेटे की परीक्षा में उत्तीर्ण होने की खुशी पर शराब के ग्लास उठाकर खुशी प्रकट करते हैं। भला ऐसी स्थिति में युवक क्या करे? वह भी अपने अभिभावक के पद-चिह्नों पर चलकर पार्टियों में रंग भरेगा। किसी विद्वान ने शराब के बारे में कहा है कि यह उस विष के सामान है जिसे पीने से धन जाता है, अपयश मिलता है और स्वास्थ्य की हानि होती है :

'मदिरा कबहूँ न पीजिये,
तजिये विषवत जानि ।
धन विनसत अपजस मिलत,
होत स्वास्थ्य की हानि।'

यदि युवा पीढ़ी मदिरा-भोग करता जाएगा तो वह दिन दूर नहीं जब वह समाज के लिए बोझ कहलायेगा। नशा राष्ट्र की उन्नति में बाधक होता है तभी तो मुंशी प्रेमचन्द ने कहा है :–

'जहाँ सौ में अस्सी आदमी भूखे मरते हैं
वहाँ डारु पीना,गरीब का रक्त पीने के बराबर है।'

मद्य-सेवन के कारण कितने लोग केंसर जैसे रोग से पीड़ित हैं। लेकिन क्या युवा पीढ़ी इस ज्वलंत समस्या को दूर करने में प्रयत्नशील है? कहावत है : *'पहले शराबी शराब पीता है, फिर शराब, शराबी को पीती है।'*

एक कर्मठ आर्यसमाज सेवी

भगवन्ती घूरा

आर्य जगत् वैदिक सिद्धांतों से प्रकाशमान है और आर्यसमाज वह वृक्ष के समान फैला हुआ वेद ज्ञान की गंगा बहती हुई प्राणी मात्र को उपकार करती हुई आगे बढ़ रही है। इस प्रगतिशील धारा में अनेक विभूतियों का योगदान समाया हुआ है। समय-समय पर उन स्मरणीय महानुभावों को श्रद्धांजलि अर्पित करना कर्तव्य समझते हैं, ताकि उन्हें अमरत्व प्रदान होवें और हमारी नई पीढ़ी भी ऐसे आदर्श महापुरुषों से प्रेरित होवें ।

सितम्बर मास की बाईस तारीख़ को पड़ता है हमारे आर्य नेता श्री मोहनलाल मोहित जी की एक सौ तेरहवीं वर्षगाँठ। आज से दस साल पहले से आप हमारे मध्य में न रहे फिर भी हम :-

उनके अचार-विचार से विरक्त नहीं हुए हैं हम ।
धरोहर को समेटे आज भी आगे बढ़ रहे हैं हम ।
सुपथिक अनुयायियों से है सामाजिक अनुशासन ।
विनती है हम पाते रहे आत्मिक बल हरदम ।

मोका पर्वतमाला के तले लावेनिर गाँव में हुआ था उनका जन्म पिता रामावतार और माँ भगवती एक धार्मिक प्रवृत्ति के दम्पति थे और खेतिहर थे। यह प्रभाव उनकी सन्तानों के जीवन को निखारा उन्होंने जीवन के प्रभातकाल से ही खेतों में काम करना और सत्संगो में जाना आदत बना डाली थी और उत्सुकता पूर्वक आगे बढ़े। यह लगन और चाह उनके भावी उत्कृष्ट जीवन की सीढ़ी थी। सत्संग ज्ञान पाने का स्रोत है और उनके लिए उन्नति मार्ग के द्वारा बिना औपचारिक पढ़ाई किये ही आप निपुणता से काम करके अर्थ का स्वामी बने और ज्ञान अर्जन करते करते भविष्य में एक प्रचुर वाचक और लेखक बने। 'सत्संग की महिमा अपरंपार' और 'सत्संग बिना विवेक न होय' उनके जीवन से एक उत्तम सीख पाये हैं हम 'जब जागे वही सवेरा' ज्यों ही वे वैदिक विचारों से प्रभावित हुए आप अपने जीवन में आर्यत्व से सजाने लगे । खान-पान रहन-सहन में सादगी थी पर विचार देने में बड़े माहिर थे। दृढ़ विश्वासी और आत्मिक बल के भरोसे आगे बढ़ते थे। परिवार की उन्नति के साथ-साथ समाज के उत्थान के लिए चिंतित रहते और एक आर्य का फ़र्ज़ समझकर सामाजिक कार्य को अनिवार्य मानते और तन मन धन से सामाजिक सवित हुए।

आर्य जगत के एक प्रतापी सेवी भी बने जब कि आपने न सिर्फ़ इस देश के आर्य समाजों का उत्थान किया, बल्कि विदेशी स्थानों पर जहाँ-जहाँ आर्य जन बसे हुए हैं अपनी उपस्थिति और योगदान देने में समर्थ थे। उनके लिए सभी समाज प्रेमी, उनके अपने होते थे, चाहे कहीं भी रहते हो। आर्यों का सहयोगी बनना और सुझाव देना अपना धर्म मानते थे। विश्व को आर्य बनाने में आपने तनमयता से जीवन पर्यन्त यथा शक्ति योगदान देते रहे यही उनके जीवन की विशेषता थी।

ऐसे दीर्घजीवी चरितार्थ महान् आत्मा को शत-शत प्रणाम और सदा के लिए पूजनीय और स्मरणीय रहे।

चमकते तारे को सदा निहारता जग सारा ।
मोहित जी ने आर्यत्व को अपनाया,
सराहा और प्रसारा ।
अतः ऐसे उत्तम कर्म से आप हैं
आर्य जगत् का ध्रुव तारा ।

तरंगे

देवानन्द गरबा

आकाश मंडल (space) में बहुत सारी तरंगे (vibrations) हैं, जिन तरंगों का हम आवाहन करते हैं, वे ही हमारे इर्द-गिर्द मंडराने लगती हैं। रेडियो का यंत्र लगभग इसी प्रकार से काम करता है। इसीलिए कहा गया है कि विज्ञान ने मानव को आधार बनाकर आविष्कार किया है। अर्थात् मानव को एक मॉडल (Model) बनाया है। जिन तरंगों को हम चाहते हैं वे हमें प्राप्त होने लगती हैं। साकारात्मक तरंगों से सद्व्यवहार और नाकारात्मक तरंगों से दुर्व्यवहार उत्पन्न होते हैं ।

संगति भी वैसी ही है, जैसी तरंग वाले व्यक्ति के साथ आप रहते हैं वैसा प्रभाव पड़ता है। 'सत्संग से लाभ कुसंग से हानि', बड़े ज्ञानी कह गए हैं। दुराचारी व्यक्ति का साथ जितनी जल्दी छोड़ दिया जाए उतना ही ठीक होता है ।

आकाशीय तरंगों को कोसमिक वायब्रेशन (cosmic vibrations) कहते हैं। जिसका शब्दिक अनुवाद ब्रह्माण्डीय कंपण होगा। इन आकाशीय तरंगों से व्यक्ति घेरा रहता है, जो उसके नाकारात्मक व साकारात्मक स्वभाव होने का परिचायक है, वैसी ही उसकी सोच बनती जाती है। उन शुभ आकाशीय तरंगों के लिए लोग नाना प्रकार के पूजा-पाठ, यज्ञ-हवन, योग-साधना, तीर्थ-यात्रा तपस्या आदि करते हैं। घने जंगलों में योगियों को तपस्या के समय ये तरंगें निर्भय बना देती हैं और उन्हें संकटों से बचाती रहती हैं। सकारात्मक तरंग वाले सफलता को चूमते हैं। पाश्चात्य वाले भी इस बात से सहमत होते हैं। अंग्रेज़ी में एक कहावत है, "Have a good feeling factor" जिसका माने हमेशा प्रसन्न चित रहो ।

परम योगी इन तरंगों को जिन्हें लोग परमात्मा की ध्वनियों की उपमा देते हैं, उन्हें सुनते हैं और आनन्द लेते हैं। इन ध्वनियों को हमारे ऋषि-मुनियों ने योग साधना के समय सुना था। उन्हें स्मरण और धारण करके 'वेद मंत्र' का नाम दिया। हम धन्य हैं जो हमें बिना कड़ी मेहनत से, सहज में वे मन्त्र प्राप्त हुए हैं, हवन के समय इन्हीं मन्त्रों से आहुति देते हैं।

जब से यह संसार बना है, तब से ये तरंगें विद्यमान रही हैं। कभी एक न कम न एक ज्यादा हुई हैं । इन तरंगों को शब्द का रूप दिया गया और शब्दों का अर्थ निकाला गया । हमारा सौभाग्य इसलिए भी है कि जिन वेद मंत्रों को श्री रामचन्द्र जी और श्री कृष्ण जी जैसे पुरुषोत्तम योगी उच्चारण करके जाप और अग्निहोत्र करते थे, उन्हें हमें उच्चारण करने का सुअवसर प्राप्त है। यज्ञ करो और पुण्य कमाओ यह कहना गलत नहीं है। यज्ञ किसी विशेष जाति, धर्म, मठ, देश के लिए नहीं, यह सार्वभौम है।

शेष भाग पृष्ठ ४ पर

Vedas and Vedanta, Concepts and Misunderstandings (2)

Prof. Soodursun Jugessur, (Dharma Bhushan , Arya Bhushan)

In the previous article I wrote about the origins of Vedas and Vedanta, and the influence of Buddhism in the development of Vedanta philosophy. A quotation from Gaudapada's treatise of Madhyamika Karika that gives the real basis for further development of Vedanta was highlighted. It is important that we understand these concepts before we can appreciate how distortions have crept in the interpretations of Vedic terminologies and ended in the development of popular Hinduism. In the current article I will elaborate on their concepts of Dwaita, Advaita, and Vashistadvaita, and efforts to reconcile the contradictory philosophies. The main paragraphs numbering follow that in the first article.

3. Dwaita, Advaita and Vashistadvaita

Shankaracharya, also known as Adi Shankara, a well known philosopher who pursued the concept further, but accepted the 'Mayavadism' or viewing the world as an illusion, of Buddhism as basis, proclaimed the oneness of God and Soul. Dr. S. Radhakrishnan says: 'Brahminism silently assimilated the best elements of the Buddhist faith.'(3) Thus developed the philosophy of Advaita or 'Monism', as distinct from Vedic Dwaita or 'Dualism' that believed that the Soul and God are two different entities. We will come to this concept later in this chapter.

Even the great Swami Vivekananda, who tried to reconcile the two schools, after his return from the west that taught him the reality of life and the need for positive action to relieve people from poverty and ignorance, when speaking to the Youth of India, has said :

'Coming to our commentators again, we find another difficulty. The Advaitic commentator, whenever an Advaitic text comes, preserves it just as it is; but the same commentator, as soon as a Dualistic text presents itself, tortures it if he can, and brings the most queer meaning out of it. Sometimes the 'Unborn' becomes a 'goat'; such are the wonderful changes effected. To suit the commentator, 'Aja' the 'Unborn' is explained as 'Aja' a she-goat. In the same way, if not in a still worse fashion, the texts are handled by the Dualistic commentator.'(4) This is all due to the intricacies of Sanskrit language. And the classical Sanskrit language of the Vedas is not the same as the language of the Upanishads.

To reconcile the two schools of Advaitavad and Dwaitavad, sages Bhaskara and Ramanuja who came later in the tenth and eleventh century A.D., said that both the Purva and Uttara Mimamsa together form one science, and study of both is necessary. They developed what is known as **Vishistaadvaita**, where Matter (Prakriti), Atma (Soul), and the Supreme Spirit (Ishwara) are three different entities. The Shvetaashvatara Upanishad says: 'There are three ultimate existences—the eternal and all-knowing and all powerful God, the eternal soul and the eternal matter, and these three constitute the Absolute. (5)This is in line with Vedic philosophy.

The arrival of Maharishi Swami Dayanand Saraswati, founder of the Arya Samaj in mid nineteenth century, enabled a rational interpretation of the Vedas, and the propagation of Vedic philosophy in its pristine form. Even Shri Aurobindo, the famous exponent of 'Integral Yoga' and the sage of Pondicherry, recognizes the authority of Swami Dayanand on the Vedas. As somebody who had mastered classical Sanskrit, with a thorough knowledge of Panini's grammar, Maharishi Swami Dayanand gave a new orientation to Vedic philosophy, and established the Arya Samaj, or the Society of Nobles, to promote the study and propagation of the Vedas.

As a spiritual seeker, the Swami also studied the Vedanta under various gurus. He had a lot of admiration for Adi Shankaracharya, who gave new life to popular Hinduism. However, after a thorough study of this doctrine, and seeing its impact on the minds of the people, he preferred the Vedic path. He propagated the Vedic dharma, exposed the unjust and corrupt practices of some influenced by the Vamamargi materialist school that gave the elite the freedom to do anything in the name of God, reinterpreted the caste system in line with the Vedic Varna system, opened the doors of learning to the down-trodden and the women folk – who, for generations, had been deprived of basic education. He further simplified complex traditional ceremonies, and won the support of forward looking social leaders. In the process he naturally trampled over the shoes of many who saw in him the threat to their traditional privileges and often to their very livelihood. No wonder various movements started against the Swami and against the Arya Samaj, movements that aimed at giving their own interpretation to Hindu doctrines that could safeguard their interests.

4. The Vedanta Philosophy

It is said that sage Vyasa, reputed author of the Mahabharata, is responsible for founding the Vedanta philosophy. However, as said earlier, Vedantic philosophy of Monism as distinct from the Vedic philosophy of Dualism is mostly propagated by Gaudapada, followed by Adi Shankaracharya, a distinguished scholar who succeeded in reestablishing Brahminism type Hinduism back in India, when agnostic Buddhism was sweeping the subcontinent. Buddhism had critically exposed the weaknesses of orthodox Hinduism plagued by unjust social doctrines sanctioned by the then ruling elite. In the name of God, people were perpetrating the worst crimes against humanity, and Gautama Buddha attacked them and their doctrine of fatalism, and went to the extent of ignoring God in preaching a social order that brought equality and justice to all, irrespective of caste or creed. However, his movement did not receive the support of most of the orthodoxy. Nor did it receive the support of philosophers and thinkers who could not reconcile life without a God as creator, sustainer and destroyer. A philosophy that could reconcile the two extremes had to be propagated, and herein came the masterstroke of Adi Shankara. He reasserted that the supreme Brahman is in everybody, of whatever caste or creed he came from, and that **this Brahman could be realized when the soul merged with the Brahman and the two became one.** Hence the doctrine of Monism where the Brahman is the 'be all and the end all' of everything. To him, social divisions were only a mirage, and good and evil were different facets of the same coin. By self-realization alone, all the apparent contradictions and distinctions could be removed.

(To be continued with further elaborations on this philosophy, in next article)

References :

3. S.Sadhakrishnan, Indian Philosophy, Vol. ii, Page 471

4. Swami Vivekananda, India's message to the world, address to the youth.

5. Ramanujacharya, Sri Bhasya, I.9

ARYODAYE

Arya Sabha Mauritius

1,Maharshi Dayanand St., Port Louis,
Tel : 212-2730, 208-7504, Fax : 210-3778,
Email : aryamu@intnet.mu,
www.aryasabhamauritius.mu

प्रधान सम्पादक : डॉ० उदय नारायण गंगू,
पी.एच.डी., ओ.एस.के., आर्य रत्न

सह सम्पादक : श्री सत्यदेव प्रीतम,
बी.ए.,ओ.एस.के,सी.एस.के.,आर्य रत्न

सम्पादक मण्डल :

(१) डॉ० जयचन्द लालबिहारी, *पी.एच.डी*
(२) श्री बालचन्द तानाकूर, *पी.एम.एस.एम, आर्य रत्न*
(३) श्री नरेन्द्र घूरा, *पी.एम.एस.एम*

Printer : BAHADOOR PRINTING CO. LTD
Ave. St. vincent de Paul, Les Pailles,
Tel : 243-1025, Fax : 243-8576

LIFE LESSONS WE HAVE TO LEARN FROM : APJ – ABDUL KALAM

Sookraj Bissessur (B.A. Hons.)

"Our conduct towards all should be guided by Love, Righteousness and Justice."

Seventh Principle of Arya Samaj

Former Indian President Abdul Kalam – was born on 15 October 1931 at Rameshwaram. As a lifetime entirely devoted Scientist, Kalam's most prominent role in India's 1998 nuclear weapon tests virtually established him as a national hero. He was raised in a Muslim Family from Tamil Nadu. His parents were Jainulabudeen and Ashiamma. He hailed from a modest and humble family.

Former President and Eminent Scientist (Dr) AP. Abdul Kalam passed away in Shillong on Monday last – (27/07/2015). Here are some of Kalam's inspirational sayings through which he will be remembered forever:

(1) **"You have to dream** before your dreams come true".

(2) **"If a country** is to be corruption free and become a nation of beautiful minds, I strongly feel there are three key societal members who can make a difference. They are the father, the mother and the teacher".

(3) **"My message,** especially to young people, is to have courage to think differently, courage to innovate and invent, to travel the unexplored path, courage to discover the impossible and to conquer the problems and succeed. These are great qualities that they must work towards. This is my message to the young people".

(4) **"To succeed** in your mission, you must have single-minded devotion to your goal".

(5) **"Let me define a Leader.** He must have vision and passion and not be afraid of any problem. Instead, he/she should know how to defeat it. Most importantly, he/she must work with integrity".

(6) **"Great dreams** of great dreamers are always transcended".

(7) **"Let us sacrifice** our today so that our children can have a better tomorrow".

(8) **"Man needs** his difficulties because they are necessary to enjoy success".

(9) **"Look at the sky.** We are not alone. The whole Universe is friendly to us and conspires only to give the best to those who dream and work".

(10) **"You see** God helps only people who work hard. That principle is very clear".

(11) **"If you fail,** never give up because **FAIL**- means **"First attempt in Learning"!** END - means - **"Effort Never Dies"**.

(12) **"If you get "NO"** as an answer, do always remember **NO** - means "Next Opportunity"- So let's be positive.

Dream-is not what you see when you sleep at night, **but** dream is something which does not let you sleep".

By way of conclusion, it would be appropriate enough for me to conclude this article with the following wise saying of famous English Writer – E.M Forster :-

"The Success of Pain and Labour Always goes to those who endeavour".

Post-Scriptum : P.S:- Kalam was active till the end. In his twitter account / Internet, he spoke of his Shillong Lecture which turned out to be his last. **"Going to Shillong…… ..to take course on Livable Planet earth aim.**

पृष्ठ ३ का शेष भाग

यज्ञ कहीं भी करो लाभ तो होता है। पर अपने गृह पर यज्ञ करने से दुगुना लाभ प्राप्त होता है। घर की शुद्धीकरण हो जाता है। यही यज्ञ गृह के लोगों के लिए एक कवच बन जाता है। तरेंगे घर में विद्यमान होती हैं, तो सबके कल्याण के लिए होती हैं ।

याद रखने की बात यह कि किसी भी कामी, क्रोधी, लोभी, अहंकारी, मोह से भरा व्यक्ति, वह आपका आराध्य ही क्यों न हो, उसके साथ अथवा पक्ष धारण करने से उल्टा फल पड़ेगा। इनसे आप में नाकारात्मक तरंगें छा जाएँगी । धीरे-धीरे आपका स्वभाव उस जैसा हो जाएगा।

बार-बार वेद मंत्रों के उच्चारण से मन में शुद्धि होती है। यम-नियम का पालन स्वाभाविक रूप से होने लगता है। हम मानव कमजोरियों से परे हो जाते हैं। काम, क्रोध, मद/मोह, लोभ, अहंकार हमसे कब छूट जाता है, पता नहीं चलता। सुख की अगाध अनुभूति होती है। इसी लिए किसी उर्दू शायर का कहना है, – *'खुद को कर बुलन्द इतना कि हर तकदीर से पहले, खुदा बंदे से पूछे, बोल तेरी रज़ा क्या है ।'*

Om ! Āyam gauha prishnirakramidasadan mātaram puraha.
Pitaram cha prayantsvaha.

Yajur Veda 3/6

cont. from pg 1

Interprétation / Anushilan

La terre avec ses océans se déplace perpétuellement dans l'espace en orbite autour de son père, le soleil.

Elle tourne aussi sur son axe (en rotation) avec sa mère, l'eau.

Ainsi nous constatons le double mouvement de la terre qui nous donne la notion du temps de la façon suivante :

(i) Elle tourne sur son axe pour créer le jour et la nuit en une rotation.

(ii) Le temps qu'elle prend pour compléter son orbite autour du soleil est dénommé une année.

Les enseignements des Vedas sont basés sur la vérité, rien que la vérité. Ils sont conformes avec toutes les disciplines de la science. Ce verset du Yajur Veda fait état du mouvement de la terre autour du soleil et toutes ses autres implications.

Dans l'Orient les Vedas ont été transmis à l'humanité à la création de l'univers, et ce qui est professé à travers ce verset du Yajur Veda date de la création du monde.

Cela prouve que l'Orient possédait toutes les disciplines de la science dès l'aube de la création.

Mais c'était tout à fait le contraire par rapport à l'Occident qui n'avait pas la bénédiction divine de bénéficier des bienfaits des Vedas.

Aux quinzième, seizième et dix-septième siècles quand les scientistes / astronomes / savants au prix de beaucoup de recherches, d'observations et de sacrifice firent cette découverte dans l'occident du double mouvement de la terre sur soi-même et autour du soleil et firent part de leurs observations à leurs concitoyens, leurs pays n'étaient pas prêts pour accepter cette vérité scientifique. Ils ont été menacés, et ostracisés.

Voici quelques témoignages de l'histoire :

(i) Le sort réservé à Nicolas Copernicus (1473-1543) un astronome / Scientiste Polonais, qui était le premier à découvrir le double mouvement de la terre (sur soi-même pour créer le jour et la nuit et en orbite autour du soleil pour compléter une année) a été persécuté, et traité d'athée.

(ii) Giordano Bruno, un Scientiste / astronome Italien fit la même découverte que Copernicus plus tard, il a été traité d'hérétique et brulé vif en 1600 dans son pays.

(iii) Galiléo Gahilée (1564-1642) un autre scientiste/astronome fit des études plus poussées sur les mouvements des corps célestes et arriva à la même conclusion que Copernicus et Bruno. Il a été persécuté, menacé, et traduit devant une cour de justice où il a été forcé de se rétracter et de dire que le soleil tourne autour de la terre.

Pour avoir la vie sauve le malheureux scientiste devait dire ceci : "Puisque vous me demandez de dire que le soleil tourne autour de la terre, je le dis : Le soleil tourne autour de la terre."

Mais en quittant : le seuil de la cour de justice il laissa entendre cette boutade aux gens présents. "J'ai dit sous contrainte ce que l'on m'avait demandé mais la vérité restera toujours la vérité. C'est la terre qui tourne autour du soleil !"

Ce n'est que bien plus tard que cette vérité scientifique a été acceptée par l'Occident.